International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 30-08-2021, Accepted: 16-09-2021, Published: 30-09-2021
Volume 7, Issue 5, 2021, Page No. 58-63

वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लों में व्यक्त राजनीतिक बोध

लक्ष्मी देवी
पीएच.डी. शोधार्थी, हिंदी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू और कश्मीर, भारत

सारांश
आज ग़ज़ल नायक-नायिका के प्रेम भरी बातचीत का पर्याय नहीं है बल्कि युग परिवर्तन के साथ-साथ ग़ज़ल के आंतरिक विषय में भी बदलाव आया है। आज का गज़लकार समाज में भ्रमात्मक संस्कृति के खोखले दावों की पहचान रखता है इसलिए वह ऐसे मनगढंत दावों का प्रतिरोध करता है | इनके पांच ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं | वशिष्ठ जी ने देश की राजनीतिक व्यवस्था, न्याय व्यवस्था, चुनाव प्रणाली, संसद का चित्रण, राजनीतिक भ्रष्टाचार, पुलिस व्यवस्था, झूठे आश्वासन, परिवारवाद और नेताओं के मुखौटों को उतारा है। राजनीति अर्थात शासक द्वारा बनाई गई नीति जिसमें जनता के हित को केन्द्र में रखा जाता था। आज बिल्कुल विपरीत परिस्थितियां हैं, अधिकांश नेता भ्रष्ट हैं जिस कारण उनका लक्ष्य स्वयं का कल्याण करना होता है। ग़ज़लकार ने गज़लों के माध्यम से जागृत करने का प्रयास किया है कि धर्म, प्रांत, जाति आदि के नाम पर किए जाने वाले प्रदर्शन इश्वर निर्मित नहीं होते बल्कि वोट बैंक साधने का तरीका होता है।

मूलशब्द: जनतन्त्र की हकीकत, भ्रष्टाचार, पुलिस तन्त्र, वंशवाद, विद्रोह

प्रस्तावना

ग़ज़ल अरबी भाषा का शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ 'महिलाओं से गुफ़्तगू' करना है। परन्तु आज ग़ज़ल नायक-नायिका के प्रेम भरी बातचीत का पर्याय नहीं है और न ही मनोरंजन का साधन मात्र है। युग परिवर्तन के साथ-साथ इसके आंतरिक विषय में भी बदलाव आया है। है। ग़ज़ल ने सामंतों की व्यवस्था, महासभाओं के दरबार और हवेलियों को छोड़ आमजन तथा उपेक्षित वर्ग की पीड़ा को अपना विषय बनाया| समकालीन हिंदी ग़ज़लकारों में ग़ज़लकार वशिष्ठ अनूप का महत्वपूर्ण स्थान हैं | अब तक इन के पांच ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं | इन की ग़ज़लों में विषय की विविधता देखने को मिलती है | अपनी गज़लों के माध्यम से उन्होंने भारतीय राजनीति के भीतर आये निजीकरण, वंशवाद, बाज़ारीकरण, भ्रष्टाचार, नेताओं के आचरण में लालच, भ्रष्ट न्यायव्यवस्था जैसे विषयों का यथास्थिति चित्रण किया है|

जनता द्वारा चुनी गई सरकार देश पर शासन करने के साथ राष्ट्र के नव निर्माण और विकास की योजनाएं बनाती है। कालान्तर में इस व्यवस्था में विसंगतियां आने लगी हैं। वशिष्ठ जी ने देश की राजनीतिक व्यवस्था, न्याय व्यवस्था, चुनाव प्रणाली, संसद का चित्रण, राजनीतिक भ्रष्टाचार, पुलिस व्यवस्था, झूठे आश्वासन, परिवारवाद और नेताओं के मुखौटों को उतारा है। लेखक ने दमघोंटू व्यवस्था पर खुलकर प्रहार किया है। वशिष्ठ जी ऐसी व्यवस्था के जड़ तंत्र को तोड़ने के लिए आम

जनता को जागरुक करने का प्रयास करते हैं। लोकतंत्र में जनता के हित को प्राथमिकता दी जाती है परन्तु आज लोकतंत्र कुछ हाथों की कठपुतली बनता जा रहा है। संसद में देश की समस्याओं का हल नहीं होता है बल्कि पक्ष और विपक्ष में केवल बहस की होड़ लगी रहती है। लोकतंत्र तथा संसद के यथार्थ को बयाँ करते हुए वशिष्ठ जी लिखते हैं:

"समाजवाद लोकतंत्र एकता व अमन
हमें फँसाने को उनके ये कुछ बहाने हैं।
विधानसभा ये संसद ये मंत्रियों के महल,
कातिलों चोरों डकैतों के अब ठिकाने हैं।
बचाये कैसे जान-माल आबरू यारों ,
उन्हीं के चोर सिपाही उन्हीं के थाने हैं।" [1]

संसद में समस्या पर केवल सांठ-गांठ, ऊपरी चर्चा और नाटकीयता होती है। विडंबना यह है कि ऐसे दोषी देश के संचालक बने हुए हैं।
संविधान की बातें केवल संविधान की किताब में ही सिमट कर रह गई हैं । वह वास्तविक धरातल पर अपना रूप नहीं ले पाई हैं। आम जनता के सामने यह प्रश्न खड़ा हो गया है कि वह अपने हक़ की बात किससे करे, किससे अपने अधिकार मांगे क्योंकि उस पर अत्याचार करने वाले ही न्याय-व्यवस्था के रक्षक बने फिरते हैं:

"सितम पर सितम ढाया जा रहा है,
हमें मुर्दा बनाया जा रहा है।
रूलाया जा रहा है झोपड़ी को,
हवेली को हँसाया जा रहा है।
उदासी गाँव की गहरा रही है,
और दिल्ली को सजाया जा रहा है।" [2]

प्रशासक अपनी शक्ति द्वारा जनता को विकलांग बना रहा है। सत्ता भी उसी के पक्ष में है, जिसके पास धन है। हमारी न्याय प्रणाली किस प्रकार न्याय दिलाने की प्रक्रिया में पीड़ित व्यक्ति के जीवन को ही ग्रस लेती है, इस पर वशिष्ठ जी अपना आक्रोश प्रकट करते हैं:

"तारीखों पर तारीखें फिर तारीखों पर तारीखें,
बँटा हुआ है सारा जीवन हर अगली सुनवाई तक।" [3]

न्याय की कोई एक तारीख निर्धारित नहीं है क्योंकि पीड़ित व्यक्ति को आजीवन न्याय नहीं मिलता बल्कि उसकी सुनवाई की तारीखें तय की जाती हैं। कई बार उसकी मृत्यु हो जाने पर भी कई पीढ़ियों तक कोर्ट में केस चलता रहता है। यह हमारी न्याय प्रणाली की त्रासदी है ।
जनतंत्र में जनता अपना चुना हुआ प्रतिनिधि संसद में भेजती है। वही प्रतिनिधि जनकल्याण की जगह 'स्व' कल्याण के लिए योजनाएं बनाता है। लोकतंत्र के नाम पर लूटतंत्र रचा जा रहा है। नेताओं के ऐसे आचरण से हम सब परिचित हैं:

"साँप-नेवले एक साथ सरकार चलायेंगे,
सारे अपराधी मिलकर अपराध मिटायेंगे।
कुछ हत्यारे कुछ डकैत कुछ तस्कर मिल-जुलकर,
इस पगलाये लोकतंत्र की शान बढ़ायेंगे।" [4]

जिन लोगों की पृष्टभूमि आपराधिक है वही नेता बनकर जनकल्याण की नीतियां बना रहे हैं। अयोग्य नेता को सत्ता चलाने का अधिकार मिल रहा है। रामराज्य के नाम पर सब कलंकित नेताओं के हाथ में हमारे देश की बागडोर संभालने का कार्य सौंपा जाता है:

"कहीं बन्दूक के बल पर कहीं पैसे की महिमा से, बहुत सी कुर्सियों पर इन दिनों मक्कार बैठे हैं।" [5]

नेताओं की योग्यता पर कभी कोई प्रश्न नहीं उठाया जाता क्योंकि राजनीति में आने के लिए किसी विशेष प्रक्रिया का सामना नहीं करना पड़ता। जो व्यक्ति किसी भी कार्य में सफल नहीं होता वह अंत में अपनी किस्मत आज़माने के लिए राजनीति में प्रवेश करता है और रातों-रात नेता भी बन जाता है। कैसी विडम्बना है कि:

"जो हर विषय में फेल था है आज मिनिस्टर,
टापर सलूट ठोंकता कैसा नसीब है।" [6]

राजनीति अर्थात शासक द्वारा बनाई गई नीति जिसमें जनता के हित को केन्द्र में रखा जाता था। आज बिल्कुल विपरीत परिस्थितियां हैं, अधिकांश नेता भ्रष्ट हैं जिस कारण उनका लक्ष्य स्वयं का कल्याण करना होता है। ऐसी स्थिति को देखकर रचनाकार के दिमाग में जो प्रश्न बार-बार आता है, वह हैः

"एक प्रश्न बार बार कौंधता है ज़ेहन में
कब तक जियेंगे कातिलों की देखभाल पर।
हाथों में हड्डियाँ हैं लहू मुँह पे लगा है,
कैसे हैं ये परिन्दे जो बैठे हैं डाल पर।" [7]

यह आक्रोश व्यक्तिगत न होकर जनता के मन के भीतर की घुटन से उपजा है। जनता अब इस प्रश्न का उत्तर चाहती है कि कब तक उसे दुष्टों की मेहरबानी पर अपना जीवन व्यतीत करना पड़ेगा ? जनता अपने साथ हो रहे शोषण का विरोध इस प्रकार व्यक्त करती है:

"हमको निगल न पायेंगी अब उनकी नीतियाँ,
हम आदमी हैं, उनके निवाले तो नहीं हैं।" [8]

अतीत के झूठे खण्डहरों पर वर्तमान में हरियाली के घोशणा पत्र निकाले जाते हैं जबकि हर सरकार केवल जनता के आँखों के आँसू का कारण बनती है। चुनाव जीतने के बाद की स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है:

"वे रोटी के विषय को टेक्स चर्चा में बदल देंगे,
गरीबी को तुरंत सेन्सेक्स चर्चा में बदल देंगे।
उन्हें रहबर न समझो वे बड़े शातिर शिकारी हैं,
वे हत्या-लूट को इंडेक्स चर्चा में बदल देंगे।
उबलते रक्त की बातें उन्हें अच्छी नहीं लगतीं,
कठिन संघर्ष को वे सेक्स चर्चा में बदल देंगे।" [9]

हर बार जनता के जज़्बातों को छला जाता है। उसके बुनियादी मुद्दों को दरकिनार कर दिया जाता है।

समाज में सरेआम जाति, धर्म, प्रांत, भाषा आदि के नाम पर इंसान को बांटा जाता है। धर्म की आड़ में इंसान को इंसान का बैरी बनाया जाता है:

"धर्म के नाम पर मूर्खों को लड़ाते रहिये,
अपनी कुर्सी के लिए वोट उगाते रहिये।
घर की दीवार को हर रोज़ गिराते रहिये,
दिलों के बीच में दीवार उठाते रहिये।
रोज़ी रोटी की कोई बात न करने पाये,
आप मज़हब का ज़हर सबको पिलाते रहिये।" [10]

भारत में भिन्न-भिन्न धर्म के लोग रहते हैं। लोगों को असली मुद्दों से भटकाकर भाईचारे के नाम पर एक भाई को दूसरे भाई का चारा बनाया जा रहा है।

प्रत्येक राजनीतिक पार्टी चुनाव में जीतने के लिए रणनीति बनाती है। विपक्ष, सरकार में आने के लिए रास्ते बनाने के तरीके खोजती है तथा जो पार्टी सत्ता में होती है वह भी अपने राज को बनाए रखने के लिए भिन्न-भिन्न पैंतरे आज़माती है। कुर्सी की लालसा में राजनैतिक पार्टियां हवा के रुख के अनुसार जनता की इच्छा तथा क्रांति जैसे मुद्दों को अपनी सुविधानुसार उठाती हैं। नफरत के तंदूर को दहकाया जाता है। सांप्रदायिक दंगे इस

प्रकार कराए जाते हैं कि लोकतंत्र की आत्मा तक तड़प उठती है:

“जो चर रहे हैं मुल्क को दिन-रात निरन्तर,
यह मुल्क उनके बाप की जागीर नहीं है।
हर मज़हबी किताब में मुर्दों का ज़िक्र है,
उनमें किसी इंसान पर तकरीर नहीं है।
कुछ ज़ालिमों की है रची सारी ये साज़िशें ,
कुदरत की बनायी कोई तकदीर नहीं है।” [11]

जनता को यह बात समझनी होगी कि धर्म, प्रांत, जाति आदि के नाम पर किए जाने वाले प्रदर्शन इश्वर निर्मित नहीं होते बल्कि वोट बैंक साधने का तरीका होता है।

राष्ट्र को सम्यक् ढंग से चलाने के लिए कुछ कानून बनाए जाते हैं। देश में रहने वाले प्रत्येक नागरिक के लिए उन नियमों का पालन करना अनिवार्य होता है। परन्तु जब कुछ लोग उन नियमों का उल्लंघन करते हैं तो विरोधियों पर शिकंजा कसने के लिए पुलिस व्यवस्था का निर्माण किया गया। पुलिस का कर्त्तव्य यह है कि वह जनता को लुटेरों, डकैतों, चोर आदि से उनकी रक्षा करे जबकि पुलिस का असली चेहरा है:

“है मिली अपराधियों को हुक्मरानी हे प्रभो!
पुलिस का चोरों के घर में चाय पानी हे प्रभो!
मेमनों की ज़िन्दगी महफूस है कब तक यहाँ,
हर तरफ है भेड़ियों की निगहबानी हे प्रभो!” [12]

पुलिस अधिकारी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह पीड़ित जनता को विरोधी तत्वों से बचाएगा परन्तु असलियत यह है कि वह लुटेरों, चोरों आदि के पोषाक बन गए हैं।

वर्तमान परिस्थितियों ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया है कि जनता के चारों ओर षड्यंत्र ही षड्यंत्र है। भ्रष्टाचार को चौतरफा देखकर जनता का मन मायूस होता जा रहा है कि वह अपना दर्द कहे तो कहे किससे क्योंकि इंसाफ दिलाने वाले ही उसका शोषण कर रहे हैं। अमन के रक्षक ही अमन के सौदागर बन गए हैं:

“इधर सड़कों पे चोरों, डाकुओं, गुण्डों का खतरा है,
उधर थानों में इन सबके बड़े सरदार बैठे हैं।” [13]

आज आम आदमी डाकुओं से ज़्यादा पुलिस वालों से डरने लगा है। पुलिस का कार्य देश की आन्तरिक नैतिकता को बनाए रखना है परन्तु जब पुलिस ही अनैतिक रास्ते पर चलती हो तो यह सवाल खड़ा होता है कि देश की रक्षा कौन करेगा? जनता चारों ओर से भ्रष्टाचार की आग में घिरी है।

वशिष्ठ जी जनता को सुलह का मार्ग छोड़कर विरोध का रास्ता चुनने को कहते हैं:

“ग़र दिखाना है तो अपने बाजुओं का बल दिखा,
अजगरों को पेट दिखलाने से कुछ होगा नहीं।
वक्त की ललकार है खंजर नहीं तो पिन चुभा,
कातिलों के पाँव सहलाने से कुछ होगा नहीं।” [14]

जनता के लिए ज़रूरी है कि वह डर कर चाटुकारिता करने का रास्ता छोड़कर विरोध करे। परिस्थितियां इतनी भयानक हो गई हैं कि जनता ने अगर मौन साध लिया तो वह अपने आत्मविश्वास पूर्ण रूप से खो देगी। वशिष्ठ जी ज़ुल्म से डटकर सामना करने का आवहन करते हैं:

“चुप्पियाँ इक दिन हमारी मौत तक ले जाएँगी,
ज़ुल्म पर खोलो ज़ुबाँ, ललकार की बातें करो।” [15]

भ्रष्टाचार राजनीति का अंग बन गया है, जिस कारण आज तक देश की उन्नति नहीं हो पाई है। योजनाओं को केवल कागज़ों में दिखाया जाता है और वास्तव में स्थिति विपरीत होती है

"यहाँ तो फाइलों में ही सभी उद्योग चलते हैं,
कोई भी योजना इस मुल्म में कैसे सफल होगी।"[16]

राजनीतिक व्यवस्था भ्रष्टाचार और अनैतिकता का दलदल बन रही है। अनूप जी सियासी लोगों के चाल-चलन के यथार्थ के संबंध में लिखते हैं:

"वे कुर्सी के सिवा सब कुछ बदल देने के हामी हैं,
वे पाले यूँ बदलते जिस तरह कपड़े बदलते हैं।
हो कोई रास्ता उनको वक्त फ़कत मंज़िल से मतलब है।
विचारों को बदलते हैं कभी राहें बदलते हैं।
जो खुद मक्कार होते, सब उन्हें मक्कार ही लगते।
कभी नारे बदलते हैं कभी वादे बदलते हैं।" [17]

ग़ौरतलब बात तो यह है कि सियासी लोग आचरण में गिरगिट की भांति होते हैं, जो केवल एक राजनीतिक पार्टी के नहीं हो पाते। वह केवल अपना फायदा देखते हैं, अगर इसके लिए उन्हें अपनी पार्टी भी बदलने पड़े तो यह उनके लिए साधारण सी बात होती है। नेताओं के आचरण में षुचिता नहीं रही है।
भारत की राजनीति में बड़े पैमाने पर वंशवाद को देखा जा सकता है। वंशवाद की जड़ें गहरी होती जा रही हैं। राजनीति को विरासत माना जा रहा है, जिसमें परिवार की एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को इसे तोहफा समझकर सौंपती है:

"लबों पर जिनके तबस्सुम भरे तराने हैं,
वतन की छाती पर बैठे ये कुछ घराने हैं।"[18]

चुनिंदा लोगों के लिए चुनाव का टिकट केवल इसलिए ज़रूरी है क्योंकि राजनीति को उनके परिवार ने व्यापार बना दिया है। वंशवाद की बीमारी देश को खोखला करती है। राजनीति को घरेलू व्यापार बना दिया गया है ।
ग़ज़लकार हुक्मरानों को चुनौती देते हुए कहते हैं कि जिस दिन जनता के जागरण की अग्नि भड़केगी उस दिन राजनीति में फैले अस्वस्थ तत्व स्वतः ही भस्म हो जाएंगे :

"उन्हें भ्रम है दुपट्टे से मशालों को बुझायेंगे,
हमारी ज़िद है चिंगारी को हम शोला बनायेंगे।"[19]

वर्तमान राजनीति की बिगड़ती दुर्दशा को देखकर ग़ज़लकार वशिष्ठ अनूप जी आँसू नहीं बहाते बल्कि उसे चुनौती के रूप में स्वीकार करते हैं।
निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि वशिष्ठ अनूप जी ने अपनी गज़लों के माध्यम से देश की राजनीतिक विसंगतियों, सीमाओं, धर्म के नाम पर हो रहे दंगों, आम आदमी की स्थिति, सरकारी अनुदान की वास्तविकता आदि विषयों को बेबाकी के साथ पाठकों के सम्मुख रखने के साथ-साथ प्रतिरोध भी किया है ।

संदर्भ ग्रन्थ

1. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 51
2. वशिष्ठ अनूप, मशालें फिर जलाने का समय है, पृ. 32
3. वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृ. 47
4. वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृ. 58
5. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 28
6. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 42
7. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 17
8. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 21
9. वशिष्ठ अनूप, मशालें फिर जलाने का समय है, पृ. 87
10. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 65
11. वशिष्ठ अनूप, मशालें फिर जलाने का समय है, पृ. 85
12. वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृ. 57

13. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 28
14. वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृ. 61
15. 15 वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृ. 83
16. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 16
17. वशिष्ठ अनूप, मशाले फिर जलाने का समय है, पृ. 33
18. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 41
19प वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 5